कृषि संस्कृति के सम्वाहक केदारनाथ अग्रवाल

डॉ. पारुल सिंह

श्री कृष्ण प्रणामी आर्ट्स कॉलेज, दाहोद

पिन- 389151, (गुजरात)

संलग्न-श्री गोविंद गुरू युनिवर्सिटी, गोधरा

मों नं. 9428673109

ईमेल:-parulsndt@gmail.com

कवि केदारनाथ अग्रवाल प्रगतिशील कवि के रुप में प्रख्यात हैं। केदारनाथजी कविता के जीवन को मनुष्य के जीवन से जोड़कर देखने में विश्वास रखते हैं। कविता हमें समय के यथार्थ के प्रति सचेत करती है। वह हमें हमारे अस्तित्व के सार से परिचित कराती है। इस विषय में केदारनाथ अग्रवाल लिखते हैं-

‘‘कविता जहाँ पहुँचे वहाँ द्रष्टि का दीपदान दे-आलोक और आँच से अवसाद, अंधकार, अज्ञान का नाश करे सच्चे समर्थ मित्र और बँधु अथवा सहकर्मी की तरह पग-पग पर साथ दे।‘‘1

केदारनाथ अग्रवाल की कविता में मानवीय आवेग है। मानवीय आवेग सार्वभाव नहीं ऐतिहासिक होते हैं। ये समय की हलचलों के साथ उठते-बनते हैं। केदारनाथ अग्रवाल जनता के समस्त राग-विरागों के कवि हैं। जनवादी काव्य धारा को सिंचित करने वाले उत्साही एवं साहसी रचनाकारों में अग्रणी प्रख्यात कवि केदारनाथ अग्रवाल यथार्थवादी दृष्टिकोण के उपासक थे। सामाजिक यथार्थ एवं भदेस व्यवस्था से टकराकर निकलने वाली कविता ही केदार को प्रिय थी। मध्यमवर्गीय परिवार में जन्म लेने वाले केदारनाथजी के काव्य-विषयों को समाहार करते हुए अशोक त्रिपाठी ने उचित ही लिखा है-

केदार धरती के कवि हैं खेत, खलिहान, कारखाने और कचहरी के कवि हैं। इन सबके दुःख-दर्द, संघर्ष और हर्ष के कवि हैं। वे पीड़ित और शोषित मनुष्य के पक्षधर हैं। वह मनुष्य के कवि हैं। मनुष्य बनना और बनाना ही उनकी जीवन की तथा कवि कर्म की सबसे बड़ी साधना तथा साधना थी।‘‘2

आज आदमी के दुःख दर्द, पीड़ा और शोषण की लड़ाई चिकनी-चुपड़ी बातों से नहीं लड़ी जा सकती उसके लिए तो अपने काव्य की धार पैनी करनी पड़ती है। इसलिए उनके काव्य में विभिन्न वर्गों के लिए विभिन्न स्तरों पर पुचकार एवं झिड़क मिलती है। छोटे किसान एवं मजदूर समाज के सबसे शोषित वर्ग हैं। उम्र भर इनकी मेहनत का पका और सुस्वादिष्ट फल दूसरे खाते रहते हैं और ये टुकुर-टुकुर उन्हें ताकते रहते हैं।

स्वतंत्रता के पश्चात् गरीबी हटाने के नारे खूब लगे परंतु ज्यों-ज्यों नारे लगते गए त्यों-त्यों भूख और गरीबी बढ़ती गई। भूखे और गरीब का इसमें कोई दोष नहीं क्योंकि वह शोषण, कालाबाजारी और सूदखोरी का शिकार हैं। केदारनाथ जी यहाँ स्पष्ट शब्दों में इस यथार्थ का चित्रण करते हैं।

‘‘किन्तु झोंपड़ी वहीं खड़ी है

नई ईंट तक नहीं लगी हैं।

बड़ी गरीबी भरी पड़ी है

वही धुआँ है

वही कर्ज है

वही सूद है

वही जमीदारों का छल है

मानव से मानव शोषित है।''3

केदारजी ने अपनी कविताओं में मजूदर का संघर्ष उनके महेनतकश जीवन, दयनीय अवस्था के जीवन को बखूबी चित्रित किया है। जो किसान धरती का सीना फाड़कर अन्न उगाता है और दूसरों का पेट भरता है, वही किसान स्वयं के जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ क्यों है ? उसी किसान-जीवन की दशा का चित्रण कवि इस प्रकार करते हैं-

''जब बाप मरा तब यह पाया।

भूखे किसान के बेटे ने।

घर का मलबा, टूटी खटिया।

कुछ हाथ भूमि-वह भी परती।

चमरौध जूते का तल्ला।

छाटी, टूटी बुढ़िया औगी।

छरनी गोरसी बहता हुक्का।

लोहे की पत्ती का चिमटा।

कंचन सुमेरु का प्रतियोगी।

द्वारे का पर्वत घूरे का।

बनिया के रुपयों का कर्जा।

जो नहीं चुकाने पर चुकता।

दीमक, गोजर, मच्छर, माटा।

ऐसे हजार सब सहावासी।

बस पही नहीं, जसे भूख मिल्ली।

अब पेट खलाए फिरता है।

चैड़ा मुँह बाए फिरता है।

वह क्या जाने आजादी क्या ?

आज़ाद देश की बातें क्या ?''4

गोजर, मच्छर दीमक, खुरपी-खुरपा, झउआ, पलड़ा, कुदाल-फावड़ा, हसियाँ, हाड़ी, गगरी-गगरा, थारी-परत आदि किसान जीवन की जिन्दगी से जुड़े नाना प्रकार के लोकजीवन के शब्दों का प्रयोग कवि ने किया है। इससे लगता है कि कृषि जीवन के बीच उनकी कितनी गहरी पैठ थी।

केदारनाथ अग्रवाल कृषक लोकजीवन के प्राकृतिक परिवेश के कवि हैं। उनकी रचनाओं में लोकजीवन के होली, दीवाली, दशहरा, खेत के गीत आदि तीज-त्यौहारों का जगह-जगह चित्रण हुआ है उत्तर भारत के कजरी, बिरहा, फहखा, धोबीगीत, विवाह गीत आदि जैसे लोकगीतों के साथ आल्हा लोकगीत की अपनी पहचान है। लोकजीवन को प्रस्तुत करजा केदारजी का लोकगीत इस प्रकार है-

‘‘गुडगुडे-गुडगुडे हुक्का पकड़े

खूब धड़ाके धुआँ उड़ाते

फूहड़ बातों की चर्चा के

फौवारे फैलाते जोते

छीपक की छोटी बाती की

मन्दी उजियारी के नीचे

घंटों आल्हा सुनते-सुनते

सो जाते हैं मुरदा जैसे।‘‘5

केदारजी की कविता में प्रकृति और लोक परिवेश की सामाजिक संस्कृति भूमिका को अलग करके नहीं देखा जा सकता। कालिदास, तुलसीदास, निराला, नागार्जुन की परंपरा में केदारजी के लोकजन के कल्याण से जुड़े हैं। केदारजी की लोक-दृष्टि मानवतावादी रही है। लोकजीवन का ऐसा कोना नहीं है जोकि उनकी दृष्टि से ओझल हो गया हो। वे आजीवन उनके बीच रहकर उनके कल्याण के लिए लड़े उत्तर-प्रदेश के अधिकांश शहरों की संस्कृति लोकजीवन जैसी ही है।

केदारनाथ अग्रवाल अपने समय के सचेत ज़ागरुक और प्रगतिशील चेतना के अग्रगामी कवि के रुप में प्रतिष्ठित हैं। इनकी कविताओं में ग्रामीण समाज, लोगों के जीवन के दुख दर्द, जनसाधारण की दशा को देखा जा सकता है। ऐसे लोगों के पक्ष में कलम के मोर्चे से लड़ाई की घोषणा करते हुए वे कृषक जीवन के संघर्ष को चित्रित करते हुए कहते हैं-

‘‘यह धरती है उस किसान की

जो बैलों के कन्धे पर बरसात धाम में

जुआ भाग्य का रख देता है.....

यह धरती है उस किसान की

नहीं कृष्ण की नहीं राम की

नहीं राव की नहीं रंक की

नहीं तेग तलवार धर्म की

धरती है केवल किसान की.....।‘‘6

कवि के अनुसार जल, जंगल और जमीन उन्हीं की है और उन्हीं की होनी चाहिए जो उससे अपना भरण-पोषण करते हैं, अन्य लोगों का भी पेट भरते हैं देश में करोड़ों टन गेहूँ सड़ रहा है, रखने के लिए जगह नहीं है और गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोग दाने-दाने तरस रहे हैं।

जन-संघर्षों के साथ केदार जी कृषक जीवन के उत्साह को देखकर कहते हैं-

‘‘आसमान की ओढ़नी ओढ़े,

धानी पहने

फसल धंधरिया

राधा बनकर धरती नाची

नाचा हंसमुख

कृषक संवरियाँ

माती थाप हवा की पड़ती

पेड़ों की बज

रही ढुलकिया

जी भर फाग पखेरु गाते

ढरकी रस की

राग-गगरिया

मैंने ऐसा दृश्य निहारा

मेरी रही न

मुझे खबरिया

खेतों के नर्तन-उत्सव में

भूला तन-मन

गेह डगरिया।‘‘7

केदारनाथ की अधिकांश कविताएँ बांदा के कमासिन गाँव की धरती और केन नदी की संस्कृति से जुड़ी हैं जिसमें वहाँ की माटी की गंध सर्वत्र विद्यमान है। दरअसल केन और केदार की कविता का अटूट रिश्ता है। केन नदी के आसपास के लोकजीवन का सम्पूर्ण परिवेश और वहाँ की सांस्कृतिक विरासत केदारजी की कविता में जीवन हो उठी है। केदारनाथ अग्रवाल लोक कवि हैं। वे भी कबीर की भाँति बिना लाग लपेट की खरी-खरी बात करते हैं। वस्तुतः केदारजी की कविता की सरलता में चित्रात्मकता और गयात्मकता है, जोकि हमारी चेतना और संवेदना को झकझोर कर रख देती है और कृषि संस्कृति एवं लोक जीवन के करीब ले जाकर खड़ा कर देती हैं-

‘‘गाय, बैल, भेड़, बकरी, पशुओं के दल में।

मूर्ख मनुष्यों का समाज, खोया रहता हैं,

सड़े घूर की, गोबर की, बदबू से दबकर

महक जिन्दगी के गुलाब की, मर जाती है।

रार, क्रोध, तकरार, द्वेष से, दुख से कातर

आज ग्राम की दुर्बल धरती घबराती है।''8

धरती के कवि केदारनाथ अग्रवाल की कविता अंचल की मिट्टी और पानी से निर्मित हुई है बांदा की ग्राम्य लोक संस्कृति का बड़ा ही सजीव चित्रण केदारजी ने यहाँ किया है-

''यह बांदा है

सूद खोर आढ़त बालों की इस नगरी में

जहाँ मार, काबर, कछार, पंडुआ की फसलें

कृषकों के पौरुष से उपजा कन-कन सोना

लढ़ियों में लद-लदकर आकर

बीच हाट में बिककर-कोठों गोदाओं में

गहरी खाहों में खो जाता है जा-जाकर

और यहाँ पर

रामपदारथ, रामनिहोरे

बेनी पण्डि, वासुदेव, बल्देव विधाता

चन्दन, चतुरी और चतुर्भज

गाँवों में आ-आकर गहरे गिरवी रखते।''9

केदारनाथ अग्रवाल ने बांदा के जिस किसान जीवन की श्रमशील संस्कृति और सूदखोरी का जिक्र किया है वह मुख्य रुप से संपूर्ण उत्तर भारत की व्यथा कथा है जो कि सदियों से चली आ रही है। खगेन्द्र ठाकुर ने लिखा है-

''केदार की कविता मनुष्य जीवन और समाज की पूरी प्रक्रिया की कविता है। इस प्रक्रिया में उन्हीं कविता सत्य और न्याय के मानव-मूल्य और सामाजिक प्रगति के, मेहनत कशों और आम जनता के यानी समाजवादी क्रान्ति के पक्ष से हैं।''10

केदारनाथजी उन कवियों में से थे जो स्व-प्रशंसा और दूसरों की चापलूसी से दूर रहे। कवि केदार अपने कवि कर्म को जानते थे इसीलिए उन्होंने अपनी कविता में खरी-खरी बात कही। उन्होंने स्वयं इस बात को स्वीकार किया है कि यदि उनके जीवन में कविता न होती तो उनका जीवन अपूर्ण रहता वे कहते हैं-

''कविता न होती तो में आदमी न बनता। कविताई न मैंने पाई, न चुराई। इसे मैंने जीवन जोतकर किसान की तरह बोया और काटा है।''11

किसानों और श्रमिकों से गहरी संवेदना रखने वाले कवि केदानाथ अग्रवाल का नाम सदैव ही कृषि संस्कृति के सम्वाहक के रुप में अग्रणी पंक्ति में रहेगा, क्योंकि इन वर्गों के दुखों का चित्रण करने के लिए जिस साहस और सपाट बयानी की आवश्यकता होती है, वह केदारजी में मौजूद थी। स्वतंत्रता के पश्चात् गरीबी हटाने के नारे खूब लगे, परंतु किसान मजदूर, गरीब जनता के दुःख

दर्द में कोई कमी नहीं आई। कवि की दृष्टि में स्वतंत्र भारत में आज के नेता और उनकी सरकारें शोषण की पोषक हैं। आम आदमी की समस्याओं से उन्हें कोई सरोकार नहीं हैं।

नागार्जुन की दृष्टि में केदारनाथजी को पढ़ना एक पूरे युग को पढ़ना है, उस यथार्थ को पढ़ना है जो उनकी कविताओं का स्वर बनकर आम जिन्दगी की तकलीफों का दृष्टा बनता है और उसे दूर करने के लिए अपनी पूरी जिन्दगी को आग के सुपुर्द कर दिए जाने के हौसले से हो जाता है।

संदर्भ

1. भूमिका अपूर्वा।

2. अशोक त्रिपाठी 'कहे केदार खरी-खरी' भूमिका से।

3. 'कहे केदार खरी-खरी' पृ. सं. 47

4. 'फूल नहीं रंग बोलते हैं' केदारनाथ अग्रवाल पृ. सं. 74

5. 'फूल नहीं रंग बोलते है' केदारनाथ अग्रवाल पृ. सं. 73

6. प्रगतिशील काव्यधारा और केदारनाथ अग्रवाल, सं. रामविलास शर्मा पृ. सं.139

7. 'फूल नहीं रंग बोलते है' केदारनाथ अग्रवाल पृ. सं. 31

8. 'गुलमेंहदी-केदारनाथ अग्रवाल पृ. सं. 63

9. 'फुल नहीं रंग बोलते है' केदारनाथ अग्रवाल पृ. सं. 85

10. 'गुलमेंहदी' केदारनाथ अग्रवाल पृ. सं. 28

11. केदारनाथ अग्रवाल 'लोक और आलोक' भूमिका से